आधुनिक भारतीय कला

7

12148CH07

भारतीय कला में आधुनिकता का परिचय

अंग्रेज़ों के द्वारा ललित कला को यूरोपीय रूप में देखा गया। उन्होंने अनुभव किया कि भारतीयों के पास ललित कलाओं के सृजन और आस्वादन के लिए प्रशिक्षण और ऐंद्रिय संवेदना नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य और उत्तरार्ध में भारत के प्रमुख शहरों में, अनेक कला विद्यालयों की स्थापना की गई, जैसे— लाहौर, कलकत्ता (अब कोलकाता), बॉम्बे (अब मुंबई) और मद्रास (अब चेन्नई)। इन कला विद्यालयों में अकादमिक व प्रकृतिवादी कला को बढ़ावा दिया गया जिसने विक्टोरियन प्रवृत्ति को प्रतिबिंबित किया। यहाँ तक कि भारतीय शिल्प को जो भी समर्थन मिला, वह यूरोपीय अभिरुचि और इसके बाज़ार द्वारा की गई माँगों पर आधारित था।

जैसा कि पिछले अध्याय में उल्लेख किया गया है कि औपनिवेशिक पक्षपात के विपरीत राष्ट्रवादी कला का उदय हुआ। 'बंगाल स्कूल ऑफ़ आर्ट' का विकास अवनीन्द्रनाथ टैगोर और ई.बी. हैवेल ने किया। भारत का प्रथम राष्ट्रवादी कला विद्यालय, 'कला भवन', 1919 में शांतिनिकेतन में नव स्थापित विश्वभारती विश्वविद्यालय में स्थापित किया गया जिसकी परिकल्पना कवि 'रवींद्रनाथ टैगोर' ने की थी। इसने बंगाल शैली की उन्नत दृष्टि को बनाए रखा, लेकिन भारतीय समाज में कला को सार्थक बनाने में स्वयं के पथ का अनुसरण किया। यह वह समय था जब पूरी दुनिया प्रथम विश्व युद्ध के कारण, गहन राजनीतिक उथल-पुथल की अवस्था में थी। इसके अलावा कलकत्ता की यात्रा करने वाली प्रसिद्ध 'बाहौस कला प्रदर्शनी', जिसकी पिछले अध्याय में चर्चा की गई थी और उस समय की कला पत्रिकाओं के कारण आधुनिक यूरोपीय कला ने भारतीय कलाकारों को प्रभावित किया। इस तरह गगनेंद्रनाथ और कवि-चित्रकार रवींद्रनाथ टैगोर परिवार के कलाकारों ने घनवाद और अभिव्यंजनावाद जैसी अंतर्राष्ट्रीय कला के बारे में जाना,

गगनेंद्रनाथ टैगोर, घनचित्रण शैली का शहर, 1925, विक्टोरिया मेमोरियल हॉल, कोलकाता, भारत

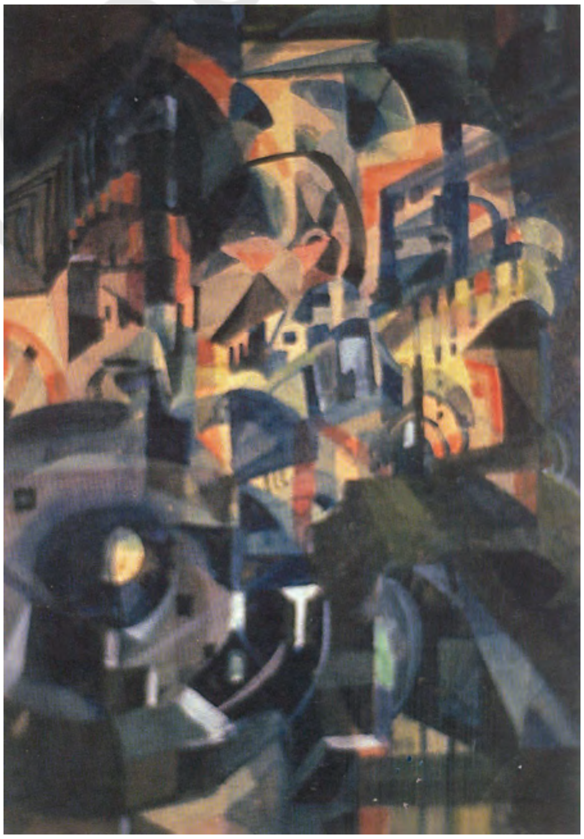

© NCERT not to be republished

रवींद्रनाथ टैगोर, डूडल,1920, विश्वभारती विश्वविद्यालय, शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल, भारत

इन्होंने अकादमिक यथार्थवाद का त्याग कर अमूर्त के साथ प्रयोग किए। उनका मत था कि, 'कला को दुनिया की नकल करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि उसे रूपों, रेखाओं और रंगों के प्रयोग से अपनी स्वयं की दुनिया का सृजन करना चाहिए।'

गगनेंद्रनाथ टैगोर ने घनवादी तत्वों को समाहित करके अपनी स्वयं की एक विशिष्ट शैली का निर्माण किया। उन्होंने अपने रहस्यमयी विशाल कक्षों और कमरों के निर्माण में ऊर्ध्वाधर, क्षैतिज और तिरछी रेखाओं का प्रयोग किया, जो प्रसिद्ध कलाकार 'पाब्लो पिकासो' के घनवादी शैली से काफी भिन्न है। पिकासो ने ज्यामितीय आकृतियों का प्रयोग करके इस शैली का आविष्कार किया था।

रवींद्रनाथ टैगोर अपने जीवन में काफी देर से दृश्य कला की ओर अग्रसर हुए। वे अपनी कविताओं को लिखते समय, अकसर डूडल (बिना सोचे-समझे किया गया रेखांकन) बनाते थे। इस प्रकार उन्होंने सुलेख की एक विशेष शैली विकसित कर ली थी। इनमें से कुछ मानव चेहरे और कुछ भू-दृश्य उनकी कविताओं के साथ मनोरम रूप में दिखलाई पड़ते थे। उनका पैलेट काले, पीले, गेरू, लाल और भूरे रंगों तक ही सीमित था। हालाँकि रवींद्रनाथ ने अपना एक छोटा-सा दृश्य संसार बनाया था, जो बंगाल स्कूल की सुंदर और नाजुक शैली से पूरी तरह से अलग था। जो अकसर अजंता भित्ति चित्रों के साथ मुगल और पहाड़ी लघुचित्रों से प्रभावित था।

नंदलाल बोस सन् 1921–22 में ललित कला संस्थान, कला भवन में शामिल हुए। अवनीन्द्रनाथ टैगोर के प्रशिक्षण ने उन्हें कला में राष्ट्रीयता से परिचित कराया, लेकिन वे अपने छात्रों और अन्य शिक्षकों के नए कलात्मक प्रयोगों में बाधक नहीं बने, बल्कि उन्हें हर तरह से प्रोत्साहित किया।

बिनोद बिहारी मुखर्जी और रामकिंकर बैज, नंदलाल बोस के सबसे रचनात्मक छात्रों में से थे, जिनके विचारों ने दुनिया को समझने में हमारी सहायता की। उन्होंने स्केचिंग और चित्र बनाने की अपनी स्वयं की अनूठी शैली विकसित की, जिसमें उन्होंने न केवल अपने आसपास के परिवेश की वनस्पतियों और जीव-जंतुओं को ही नहीं, बल्कि वहाँ रहने वाले लोगों का भी सफलतापूर्वक चित्रण किया। शांतिनिकेतन के बाहरी क्षेत्रों में संथाल जनजातियों की एक बड़ी आबादी थी और ये कलाकार अकसर उन्हें चित्रित किया करते थे तथा उनकी मूर्तियाँ भी बनाते थे। इसके अतिरिक्त, चित्रण के लिए साहित्यिक विषयों में भी उनकी रुचि थी।

© NCERT not to be republished

रामायण और *महाभारत* जैसे प्रसिद्ध महाकाव्यों पर आधारित चित्र बनाने के अतिरिक्त, बिनोद बिहारी मुखर्जी को मध्यकालीन संतों के जीवन ने भी आकर्षित किया। शांतिनिकेतन में हिंदी भवन की दीवारों पर, उन्होंने 'मध्यकालीन संत' नामक एक भित्ति चित्र बनाया, जिसमें उन्होंने तुलसीदास, कबीर और अन्य लोगों के जीवन के माध्यम से मध्यकालीन भारत के इतिहास को चित्रित करने का प्रयास किया है। इसमें उनकी मानवीय शिक्षाओं पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

जैमिनी रॉय, ब्लैक हॉर्स (काला घोड़ा), 1940, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नयी दिल्ली, भारत

रामकिंकर बैज, एक ऐसे कलाकार थे, जिन्हें प्रकृति से विशेष लगाव था। उनकी मूर्तिकला और चित्रकला में उनके दैनिक जीवन के अनुभवों को स्पष्टता से देखा जा सकता है। उनकी लगभग सभी मूर्तियाँ और चित्र उनके परिवेश के अनुभव पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए, कला भवन परिसर के खुले प्रांगण में निर्मित मूर्ति 'संथाल परिवार' जिसमें एक संथाल परिवार की दैनिक गतिविधियों को उनके वास्तविक आकार से बड़ा स्मारकीय रूप दिया गया है। इसके निर्माण के लिए आधुनिक सामग्रियों का प्रयोग किया गया। धातु के ढाँचे (armature) के ऊपर सीमेंट व गिट्टी के मिश्रण का आवश्यकतानुसार प्रयोग करके इसका निर्माण किया गया है। उनकी शैली डी.पी. रॉय चौधरी जैसे पूर्ववर्ती मूर्तिकार के विपरीत थी, जिन्होंने श्रमिकों के उत्तम 'श्रम की विजय' (ट्राइम्फ़ ऑफ़ लेबर) के निर्माण के लिए अकादमिक यथार्थवाद का प्रयोग किया था।

यदि ग्रामीण समुदाय, बिनोद बिहारी मुखर्जी और रामकिंकर के लिए महत्वपूर्ण था, तो जैमिनी रॉय ने भी इसे अपनी कला में प्रासंगिक बनाया। पिछले अध्याय में रॉय पर एक कलाकार के रूप में संक्षिप्त चर्चा की गई थी, जिन्होंने कलकत्ता के सरकारी 'स्कूल ऑफ़ आर्ट' में प्राप्त स्वयं के प्रशिक्षण को अस्वीकार कर दिया था। अवनीन्द्रनाथ टैगोर के छात्र होने के कारण, उन्होंने अकादमिक कला की निरर्थकता का अनुभव किया। उन्होंने देखा कि बंगाल की ग्रामीण लोक कलाओं में ऐसी बहुत कुछ समानता थी, जिसे पिकासो और पॉल ली जैसे आधुनिक यूरोपीय चित्रकार चित्रित किया करते थे। आखिरकार पिकासो, अफ्रीकी मास्क में पाए गए स्पष्ट रूपों से प्रेरणा लेकर, घनवाद में पहुँचे थे। रॉय ने भी सरल और शुद्ध रंगों का प्रयोग किया और गाँव के कलाकार की तरह उन्होंने वनस्पतियों और खनिजों से अपने रंग बनाए। उनके चित्रों की उनके परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा सरलतापूर्वक प्रतिलिपियाँ तैयार की जाती थीं। यह प्रथा गाँव के कारीगरों में प्रचलित थी। गाँव के

© NCERT not to be republished

कलाकारों से भिन्न उनकी कला में जो अंतर था, वह यह था कि रॉय अपने चित्रों पर हस्ताक्षर किया करते थे। उनकी शैली की पहचान आज एक विशिष्ट व्यक्तिगत शैली के रूप में होती है, जो कला विद्यालयों के शैक्षणिक प्रकृतिवाद व रवि वर्मा के भारतीय यथार्थवाद के साथ-साथ बंगाल स्कूल के कुछ कलाकारों द्वारा प्रचलित विशिष्ट 'कोमल शैली' से अलग है।

अमृता शेरगिल (1913–41), जो अर्द्ध हंगेरियन और अर्द्ध भारतीय हैं, वे एक अद्वितीय महिला कलाकार के रूप में उभरती हैं। उन्होंने 1930 के दशक में आधुनिक भारतीय कला के विकास में विशिष्ट योगदान दिया। दूसरे कलाकारों के विपरीत, उन्होंने पेरिस में प्रशिक्षण प्राप्त किया था। अतः उन्हें प्रभाववाद और उत्तर प्रभाववाद जैसे आधुनिक यूरोपीय कला रुझानों का प्रत्यक्ष अनुभव था। यह तय करने के बाद कि वे भारत को अपना कार्य क्षेत्र बनाएँगी, उन्होंने भारतीय विषयों और आकृतियों के साथ अपनी कला को विकसित करने के लिए काम किया। अमृता शेरगिल ने आधुनिक यूरोपीय कला के साथ भारतीय कला की लघु और भित्ति चित्र परंपराओं को आत्मसात किया। युवावस्था में ही उनकी मृत्यु हो गई, लेकिन वह अपने पीछे उल्लेखनीय कलाकृतियों की विरासत छोड़ गईं, जो उनकी प्रायोगिक भावना को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। साथ ही जो अगली पीढ़ी के भारतीय आधुनिकतावादियों पर अपना विशेष प्रभाव छोड़ती है।

भारत में आधुनिक विचारधारा और राजनीतिक कला

शेरगिल की मृत्यु के उपरांत भी भारत ब्रिटिश शासन के अधीन था, जिसे द्वितीय विश्व युद्ध जैसी वैश्विक घटनाओं ने गहराई से प्रभावित किया। अप्रत्यक्ष घटनाओं में से एक बंगाल में अकाल का प्रकोप था, जिसने इस क्षेत्र को उजाड़कर रख दिया। ग्रामीणों को इस अकाल ने शहरों में बड़े स्तर पर प्रवास के लिए मजबूर किया।

प्रोदोष दास गुप्ता,
ट्विंस ब्रोंज (जुड़वाँ कांस्य) 1973,
राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय,
नयी दिल्ली, भारत

इस मानवीय संकट ने कई कलाकारों को समाज में उनकी भूमिका पर विचार करने के लिए मजबूर किया। मूर्तिकार प्रोदोष दास गुप्ता के नेतृत्व में, 1943 में कुछ युवा कलाकारों ने कलकत्ता समूह का गठन किया, जिसमें निरोद मज़ूमदार, परितोष सेन, गोपाल घोष और रथिन मोइत्रा शामिल थे। समूह एक ऐसी कला में विश्वास करता था जो चरित्र में सार्वभौमिक थी और पुराने मूल्यों से मुक्त थी। उन्हें बंगाल स्कूल ऑफ़ आर्ट पसंद नहीं थी, क्योंकि यह शैली बहुत भावुक थी और अतीत में भी अधिक रुचि रखती थी; वे चाहते थे कि उनके चित्र और मूर्तियाँ अपने समय के साक्षी हों।

उन्होंने विवरणों को त्यागकर अपनी दृश्य अभिव्यक्ति को सरल बनाना शुरू कर दिया। इस तरह के प्रयास से उन्होंने कला के तत्वों, सामग्री, सतह,

© NCERT not to be republished

Chapter 7.indd 102 25 February 2022 05:23:51

रूपों, रंगों, छाया और पोत (बनावट) आदि पर अधिक बल दिया। दक्षिण भारत के मूर्तिकार, पी.वी. जानकीराम (गणेश) से उनकी तुलना की जा सकती है, जिन्होंने रचनात्मक तरीके से धातु की चादरों पर काम किया है।

गाँवों और शहरों में अपने आसपास की गरीबी और लोगों की दुर्दशा को देखकर, कलकत्ता में कई युवा कलाकार समाजवाद और विशेष रूप से मार्क्सवाद की ओर आकर्षित हुए। इस आधुनिक दर्शन को पश्चिम में उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में कार्ल मार्क्स द्वारा उल्लेखित किया गया था। इस दर्शन ने समाज में व्याप्त वर्ग अंतर के बारे में महत्वपूर्ण प्रश्न पूछे थे। इस अवधारणा ने कलाकारों को बहुत प्रभावित किया। वे चाहते थे कि उनकी कला, इन सामाजिक समस्याओं के बारे में चर्चा करे। चित्तप्रसाद और सोमनाथ होरे जैसे भारत के दो सबसे प्रमुख राजनीतिक कलाकारों ने इन सामाजिक सरोकारों को व्यक्त करने के लिए एक मज़बूत माध्यम के रूप में 'प्रिंटमेकिंग' को अपनाया। 'प्रिंटमेकिंग' के द्वारा एक कलाकृति की कई प्रतिकृतियों का निर्माण करना आसान हो जाता है, साथ ही इस तरह वह अधिक लोगों तक पहुँच भी जाती है। चित्तप्रसाद की नक्काशी (एचिंग), लीनोकट (मुद्रण) और शिलामुद्रण में गरीबों की विकट परिस्थितियों को दिखाया गया है। इसमें आश्चर्य नहीं कि उन्हें भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने बंगाल अकाल से प्रभावित गाँवों की यात्रा करने और स्केच बनाने के लिए कहा, जोकि बाद में *हंग्री बंगाल* के नाम से पैम्फ़लेट के रूप में प्रकाशित हुए।

चित्तप्रसाद, हंग्री बंगाल (भूखा बंगाल), 1943, दिल्ली आर्ट गैलरी, नयी दिल्ली, भारत

एम. एफ. हुसैन, किसान परिवार, 1940, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नयी दिल्ली, भारत

प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट्स ग्रुप ऑफ़ बॉम्बे और बहुमुखी भारतीय कला

राजनीतिक एवं कलात्मक स्वतंत्रता की अभिलाषा— जल्द ही उन युवा कलाकारों के बीच व्यापक रूप से फैल गई, जिन्होंने ब्रिटिश राज से भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति देखी। बॉम्बे में, कलाकारों के एक अन्य समूह ने 1946 में 'द प्रोग्रेसिव्स' नामक एक समूह का गठन किया। फ्रांसिस न्यूटन सूज़ा इसके मुख्य नेता थे, जिसमें एम.एफ़. हुसैन, के.एच. आरा, एस.ए. बाकरे, एच.ए. गाडे और एस.एच. रज़ा शामिल थे। सूज़ा, कला स्कूलों में व्याप्त परंपराओं पर प्रश्न उठाना चाहते थे। उनके लिए आधुनिक कला

© NCERT not to be republished

एक नई स्वतंत्रता की ओर अग्रसर थी, जो सौंदर्य और नैतिकता की पारंपरिक भावना को चुनौती दे सके। हालाँकि, उनके प्रयोगात्मक कार्य मुख्य रूप से महिलाओं पर केंद्रित थे, जिन्हें उन्होंने नग्न रूप में चित्रित किया। उनके शारीरिक अनुपात को बढ़ा-चढ़ाकर बनाया और सौंदर्य की मानक धारणाओं को तोड़ दिया।

दूसरी ओर, एम.एफ़. हुसैन चित्रकला की आधुनिक शैली को भारतीय संदर्भ में समझने योग्य बनाना चाहते थे। उदाहरण के लिए, उन्होंने पश्चिमी अभिव्यंजनवादी तूलिका घात (ब्रश स्ट्रोक) का प्रयोग चमकदार भारतीय रंगों के साथ किया। उन्हें न केवल भारतीय पौराणिक कथाओं और धार्मिक स्रोतों ने, बल्कि लघुचित्रों, ग्राम-शिल्प और यहाँ तक कि लोक खिलौनों की शैली ने भी आकर्षित किया।

भारतीय विषयों के साथ चित्रकला की आधुनिक शैली के सफलतापूर्वक संयोजन के परिणामस्वरूप, हुसैन की कला अंततः विश्व की आधुनिक कला में आधुनिक भारतीय कला का प्रतिनिधित्व करने लगी। 'मदर टेरेसा' नामक चित्र यह समझने के लिए एक अच्छा उदाहरण है कि कैसे उन्होंने आधुनिक कला में उन विषयों को चित्रित किया, जो भारत के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय दर्शक के लिए महत्वपूर्ण हैं।

अमूर्तन — एक नई अवधारणा

यदि देखा जाए तो हुसैन काफी हद तक एक आकृतिमूलक कलाकार बने रहे, जबकि एस.एच. रज़ा अमूर्तन (एब्सट्रैक्शन) की दिशा में अग्रसर हुए। कोई आश्चर्य नहीं है कि यह 'भू-दृश्य' (लैंडस्कैप) इस कलाकार का पसंदीदा विषय था। इनके रंग चटक से लेकर कोमल और एकवर्णी (मोनोक्रोम) थे। यदि हुसैन ने भारतीय विषयों को चित्रित करने के लिए विशिष्ट आधुनिक आकृतियों का प्रयोग किया, तो रज़ा ने उसे अमूर्तन के माध्यम से प्रस्तुत किया। उनके कुछ चित्र पुराने मंडल और यंत्र के डिज़ाइनों से प्रभावित हैं यहाँ तक कि उन्होंने भारतीय दर्शन की एकात्मकता के प्रतीक 'बिन्दु' का प्रयोग किया है। बाद में, गायतोंडे ने भी अमूर्तन का अनुसरण किया, जबकि के.के. हेब्बार, एस. चावड़ा, अकबर पदमसी, तैयब मेहता, कृष्ण खन्ना, अमूर्त और आकृतिमूलक कला के बीच ही घूमते रहे।

एस.एच. रज़ा, माँ, 1972, बॉम्बे, भारत

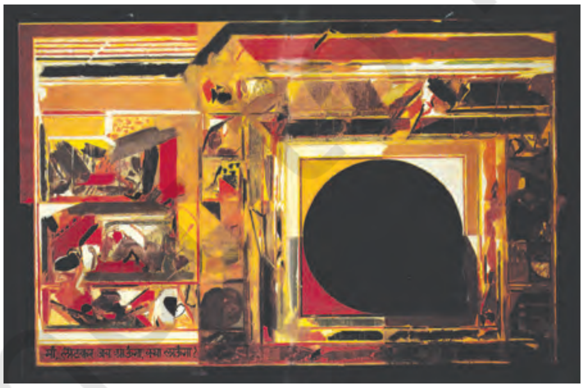

कई मूर्तिकारों जैसे पिलो पोचखानवाला और कृष्ण रेड्डी जैसे 'प्रिंटमेकर्स' के लिए अमूर्तन महत्वपूर्ण था। उनके लिए नई सामग्री का उपयोग उतना ही महत्वपूर्ण था, जितना कि नए रूपाकार का। चित्रकला, छापाकला या मूर्तिकला में, 1960 और 1970 के दशक में कई कलाकारों के लिए अमूर्तन विशेष

Chapter 7.indd 104 24 March 2022 04:33:33

लोकप्रिय था। दक्षिण भारत में, के.सी.एस. पणिकर ने मद्रास के पास एक कलाकार गाँव 'चोलमंडलम' की स्थापना की थी। वह अमूर्तन में अग्रणी थे। वास्तव में, तमिल और संस्कृत लिपियों, फ़र्श की सजावट और ग्रामीण शिल्प से कलात्मक रूपांकनों को दिखाते हुए उन्होंने बताया कि अमूर्त का भारत में एक लंबा इतिहास है।

जी. आर. संतोष, शीर्षकहीन, 1970, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नयी दिल्ली, भारत

हालाँकि, 1970 के दशक के उत्तरार्ध तक अंतर्राष्ट्रीयवाद (जिसमें एक कलाकार स्वतंत्र रूप से पश्चिमी आधुनिक प्रवृत्तियों जैसे कि घनवाद, अभिव्यंजनावाद, अमूर्तन आदि) और स्वदेशीवाद (जिसमें कलाकारों ने देशी कलाओं की ओर रुख किया था) के बीच तनाव बढ़ गया था। अमरनाथ सहगल जैसे मूर्तिकारों ने अमूर्त और मूर्त के बीच संतुलन पर आघात किया और तार के उपयोग से 'क्राईज़ अनहर्ड' की तरह ही शानदार मूर्ति बनाईं। मृणालिनी मुखर्जी की रचनाएँ, अमूर्तन की ओर अधिक झुकी हुई दिखाई देती हैं, उन्होंने सुतली के रेशों जैसे अभिनव माध्यम से 'वनश्री' नामक कृति का निर्माण किया।

कई भारतीय कलाकार और आलोचक पश्चिम से आधुनिक कला की नकल के बारे में चिंतित हुए और उन्होंने स्वयं की कला में एक भारतीय पहचान स्थापित करने की आवश्यकता महसूस की। 1960 के दशक में, दिल्ली में बीरेन डे और जी.आर. संतोष और के.सी.एस. पणिकर ने मद्रास में, इस दिशा में कदम बढ़ाए। वे एक अद्वितीय भारतीय अमूर्त कला बनाने के लिए अतीत और स्थानीय कलात्मक परंपराओं की ओर अग्रसर हुए।

के.सी.एस. पणिकर, द डॉग (कुत्ता) 1973, राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नयी दिल्ली, भारत

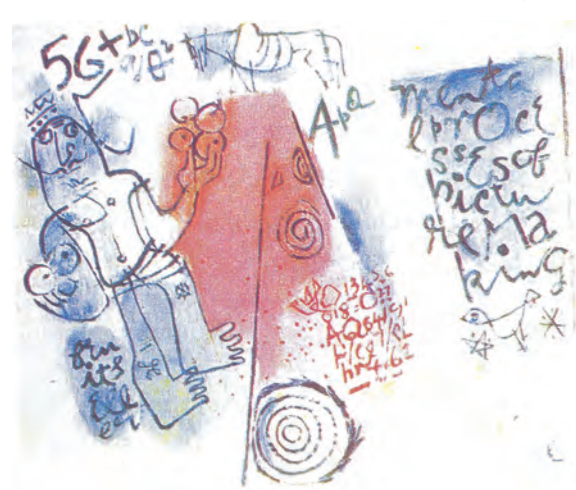

यह शैली पहले पश्चिम और बाद में भारत में सफल हुई और इसे 'नव-तांत्रिक' कला के रूप में जाना जाने लगा, क्योंकि इसमें योग व ध्यान यंत्रों की तरह ज्यामितीय आकृतियों का प्रयोग किया गया है। पश्चिम में 'हिप्पी आंदोलन' के उत्कर्ष के समय यह बनाई गई। इस तरह की कलाकृतियों को एक तैयार बाज़ार मिला। साथ ही संग्रहालयों और संग्रहकर्ताओं द्वारा भी समान रूप से इनका संग्रह किया गया। इस शैली को भारतीय अमूर्तन के रूप में देखा जाने लगा। बीरेन डे ने अपनी रचनाओं में रंगों और पैटर्नों के मनोहारी प्रयोगों को जन्म दिया। जी.आर. संतोष ने पुरुष और महिला ऊर्जा के लौकिक संयोग का चित्रण

© NCERT not to be republished

किया, जो हमें तांत्रिक दर्शन के पुरुष और प्रकति का स्मरण दिलाते हैं। दूसरी ओर, के.सी.एस. पणिकर ने अपने क्षेत्र में प्रचलित आरेखों, लिपियों और चित्रलेखों का उपयोग किया और उनसे अपनी शैली विकसित की, जो कि आधुनिक और विशिष्ट रूप से भारतीय, दोनों थी।

इसी अर्थ में, संकलनवाद (electicism) जिसमें कई स्रोतों से कलाकारों ने विचारों को संग्रहित किया, अनेक भारतीय आधुनिकतावादियों की एक महत्वपूर्ण विशेषता बन गई। इनमें रामकुमार, सतीश गुजराल, ए. रामचंद्रन और मीरा मुखर्जी जैसे कुछ नाम उल्लेखनीय हैं।

बॉम्बे प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट्स ग्रुप के समय से, कलाकारों ने अपने स्वयं के घोषणापत्र या लेख लिखना शुरू किया, जिसमें उन्होंने अपनी कला के मुख्य उद्देश्यों को घोषित किया और यह भी बताया कि किस तरह से वह अन्य से भिन्न हैं। सन् 1963 में, जे. स्वामीनाथन के नेतृत्व में एक अन्य समूह गठित हुआ, जिसका नाम 'समूह 1890' था। स्वामीनाथन ने एक घोषणापत्र भी प्रकाशित किया, जिसमें कलाकारों ने किसी भी विचारधारा से मुक्त होने का दावा किया। किसी भी पूर्व निर्धारित योजना के बजाय, उन्होंने चित्र में प्रयोग की जाने वाली सामग्रियों को एक नये रूप में अपनाया। उन्होंने एक नई कलात्मक भाषा के रूप में अपने चित्रों में अंकित खुरदुरी बनावट और सतह के महत्व के बारे में लिखा। इसमें गुलाम मोहम्मद शेख, ज्योति भट्ट, अंबादास, जेराम पटेल तथा मूर्तिकार राघव कनेरिया और हिम्मत शाह जैसे कलाकार सम्मिलित थे। यह एक अल्पकालिक आंदोलन था, लेकिन इसने अगली पीढ़ी के कलाकारों, विशेष रूप से मद्रास के पास चोलमंडलम स्कूल से जुड़े लोगों को प्रभावित किया।

आधुनिक भारतीय कला का विश्लेषण (ट्रेसिंग)

भारतीय आधुनिक कला में भले ही कुछ विचार पश्चिम से लिए गए हों, लेकिन वह उससे काफ़ी भिन्न है। इस तथ्य को अस्वीकृत करना असंभव है कि, एक कला आंदोलन के रूप में 'आधुनिकतावाद' भारत में तब आया जब यह एक ब्रिटिश उपनिवेश था। यह तब और स्पष्ट होता है जब हम गगनेंद्रनाथ, अमृता शेरगिल और जैमिनी रॉय जैसे कलाकारों की ओर रुख करते हैं, जिन्हें 1930 के दशक की शुरुआत में 'आधुनिक' माना जाता था। पश्चिम में, विशेष रूप से यूरोप में, आधुनिक कला तब सामने आई, जब कला अकादमियों के शास्त्रीय यथार्थवाद को अस्वीकृत किया जाने लगा। इन आधुनिक कलाकारों ने स्वयं को 'आवाँ-गार्द' (avant-garde) परंपरा से आधुनिकता के परिवर्तित रूप में देखा।

© NCERT not to be republished

औद्योगिक क्रांति के बाद, तकनीक के अभूतपूर्व विकास के कारण, चर्चों और महलों को अलंकृत करने वाली पारंपरिक कला ने अपना अर्थ खो दिया। एडवर्ड माने, पॉल सूज़ा, क्लॉड मोने और अन्य प्रारंभिक आधुनिक फ्रांसीसी कलाकारों ने प्रमुख कला संस्थानों के बाहर काम करना प्रारंभ कर दिया। कैफे और रेस्तरां, कलाकारों, लेखकों, फ़िल्म निर्माताओं और कवियों के लिए महत्वपूर्ण स्थान बन गए, जहाँ वे मिलते और आधुनिक जीवन में कला की भूमिका के बारे में चर्चा करते थे। भारत में, एफ़.एन. सूज़ा और जे. स्वामीनाथन जैसे कलाकारों ने कला संस्थानों के खिलाफ़ विद्रोह किया और उन्होंने स्वयं को इन पश्चिमी कलाकारों के साथ संबद्ध किया। आधुनिक भारतीय कला की कहानी में एक बड़ा विवाद यह है कि इससे आधुनिकता और उपनिवेशवाद, दोनों निकटता से जुड़े थे। राष्ट्रवाद न केवल एक राजनीतिक आंदोलन था, बल्कि 1857 के विद्रोह के बाद उत्पन्न हुआ और इसने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को भी जन्म दिया। कला में स्वदेशी जैसे विचारों को उन्नीसवीं शताब्दी के अंत और बीसवीं शताब्दी के आरंभ में आनंद कुमारस्वामी जैसे कला इतिहासकारों ने बढ़ावा दिया। इसका अर्थ यह है कि हम भारतीय आधुनिकतावाद को पश्चिम की अंधी नकल के रूप में नहीं समझ सकते, बल्कि भारत में आधुनिक कलाकारों द्वारा चयन की अपनी एक सुविचारित प्रक्रिया थी।

हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि कैसे उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में, कलकत्ता में अवनीन्द्रनाथ टैगोर के नेतृत्व में बंगाल स्कूल के उत्थान के लिए कला में राष्ट्रवाद का महत्व रहा है। इसके बाद कला भवन में शांतिनिकेतन में, उसने एक अलग रूप धारण किया। अवनीन्द्रनाथ टैगोर के शिष्यों, जैसे— नंदलाल बोस और असित हल्दार ने पिछली परंपराओं, जैसे— अजंता भित्ति चित्र, मुगल, राजस्थानी और पहाड़ी लघुचित्र आदि से प्रेरणा प्राप्त की।

हालाँकि, हम कह सकते हैं कि आधुनिक भारतीय कला में गगेंद्रनाथ टैगोर, रवींद्रनाथ टैगोर, जैमिनी रॉय, अमृता शेरगिल, रामकिंकर बैज और बिनोद बिहारी मुखर्जी जैसे कलाकारों को एक विशिष्ट दृष्टिकोण से स्थान प्राप्त है। आइए, एक त्वरित अवलोकन करें कि भारत में आधुनिक कला कैसे विकसित होती है।

आधुनिक भारतीय कला के बारे में एक रोचक तथ्य है कि चित्रकला और मूर्तिकला में विषय काफ़ी हद तक ग्रामीण भारत से लिए गए थे। 1940 और 1950 के दशक में बॉम्बे प्रोग्रेसिव और कलकत्ता समूह के कलाकारों के साथ भी यही स्थिति रही। भारतीय कलाकारों की कृतियों में शहर और शहरी जीवन शायद ही कभी दिखाई दिए। संभवतः असली भारत गाँवों में रहता है। 1940 और 1950 के दशक के भारतीय कलाकारों ने शायद ही कभी अपने तत्काल सांस्कृतिक परिवेश को देखा।

© NCERT not to be republished

नवीन कला आकृतियाँ और 1980 के दशक की आधुनिक कला

सन् 1970 के दशक से, कई कलाकारों ने आकृतियों और कहानियों की ओर बढ़ना शुरू किया, जिन्हें पहचानना आसान है। संभवतः यह 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध और बांग्लादेश के जन्मोपरांत सामाजिक समस्याओं पर अपनी चिंताओं को व्यक्त करने का एक तरीका था। जबकि बड़ौदा में के.जी. सुब्रमण्यन, गुलाम मोहम्मद शेख और भूपेन खक्कर ने अपने चित्रों में कहानी को वर्णनात्मक रूप में चित्रित करना शुरू कर दिया, पश्चिम बंगाल में जोगन चौधरी, बिकाश भट्टाचार्जी, गणेश पाइन ने भी उन सामाजिक समस्याओं को चित्रित किया, जिन्होंने उन्हें विचलित किया।

पिछली पीढ़ियों के भारतीय कलाकारों की तरह, वे भी पुराने लघुचित्रों और प्रचलित कला से प्रभावित हुए, जैसे— कैलेंडर तथा लोककला ताकि लोकप्रिय कला रूपों द्वारा उन कहानियों को चित्रित कर सकें, जो ज़्यादा लोगों द्वारा समझी जा सकें।

मानव और जानवरों की आकृतियों का प्रयोग ज्योति भट्ट (देवी), लक्ष्मा गौड़ (मैन वूमन, ट्री), अनुपम सूद (ऑफ़ वॉल्स) जैसे छापाकारों की कृतियों में देखे जा सकते हैं। इनमें दुनिया में पुरुषों और महिलाओं के बीच के सामाजिक असमानता के संघर्ष को दिखाने का प्रयास किया गया है। अर्पिता सिंह, नलिनी मालानी, सुधीर पटवर्धन और ऐसे कई कलाकारों ने बड़े शहरों में रहने वाले लोगों के पलायन की ओर ध्यान आकर्षित किया। इनमें से कई आधुनिक कलाकारों ने इन शहरी समस्याओं को चित्रित किया और दुनिया को शोषितों की दृष्टि से देखने की कोशिश की।

सन् 1980 के दशक में, बड़ौदा स्कूल में एक महत्वपूर्ण मोड़ आया, जो 1950 के अंत में स्थापित हुआ था। कलाकारों की सोच में परिवर्तन आया और उन्होंने अपने आसपास के परिवेश में रुचि लेना आरंभ की। कई कलाकारों को लोकतंत्र में एक नागरिक के रूप में उनकी भूमिका के बारे में पता चला और इस दौरान घटित होने वाली सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं को तत्कालीन कला में स्थान मिला।

जी.एम. शेख,
सिटी फ़ॉर सेल, (बिक्री के लिए शहर), 1984, विक्टोरिया और अल्बर्ट संग्रहालय, लंदन, यू.के. (यूनाइटेड किंगडम)

उन्होंने तथ्य के साथ कल्पना, आत्मकथा के साथ ख्वाब (फैंट्सी) को संयोजित करने का एक नया रास्ता खोजा और अन्य ऐतिहासिक कला शैलियों से अपनी शैली विकसित की। गुलाम मोहम्मद शेख ने बड़ौदा के पुराने बाज़ार की व्यस्त गलियों को चित्रित किया। इस दौरान उन्होंने सिएना के एक मध्ययुगीन शहर

© NCERT not to be republished

और इटली के लोरेंज़ेट्टी बंधुओं की शैली से भी प्रेरणा प्राप्त की। कला इतिहास के शिक्षक होने के कारण, उन्हें पता था कि विश्व के विभिन्न भागों के कलाकारों ने पहले के समय में किस प्रकार चित्रण किया।

के.जी. सुब्रमण्यन, शेख के शिक्षक और बड़ौदा स्कूल के संस्थापक सदस्य थे। उन्होंने शांतिनिकेतन में अध्ययन किया था और अपने शिक्षकों, बिनोद बिहारी मुखर्जी और रामकिंकर बैज से कला की सार्वजनिक भूमिका के बारे में सीखा था। वे भित्ति चित्रण या बड़े सार्वजनिक भवनों पर निर्मित कला में रुचि रखते थे, जिसे सभी द्वारा देखा जा सकता है। वह सैंड कास्टिंग की तकनीक से आकर्षित थे, जो स्थानीय राजस्थानी कलाकारों को ज्ञात थी। उन्होंने राजस्थानी कलाकारों से सीखा कि कैसे रूपाकारों की मूल इकाई को दोहराकर बड़े पैमाने पर उभारयुक्त मूर्तियाँ बनाई जाती हैं।

उनके द्वारा निर्मित अनेक भित्ति चित्रों में से, एक प्रसिद्ध कलाकृति कला भवन की बाहरी दीवार पर बनी है। वह नहीं चाहते थे कि कला केवल दीर्घाओं तक ही सीमित रहे, बल्कि वह सार्वजनिक भवनों पर निर्मित की जाए ताकि सभी उसे देख सकें। कला का ऐसा सार्वजनिक दृश्य 'प्लेस फ़ॉर पीपल' नामक 1981 की एक ऐतिहासिक प्रदर्शनी में भी देखा जा सकता है। इसे दिल्ली और बॉम्बे में दिखाया गया था और इसमें छह कलाकार थे—भूपेन खक्कर, गुलाम शेख, विवान सुंदरम, नलिनी मालानी, सुधीर पटवर्धन और जोगेन चौधरी। प्रथम दो कलाकार बड़ौदा

के.जी. सुब्रमण्यन, तीन पौराणिक देवियाँ, 1988, कला भवन, शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल, भारत

से थे और प्रख्यात कला समीक्षक, गीता कपूर ने इसके बारे में लिखा है। अब तक, हमने स्वयं कलाकारों द्वारा लिखे गए घोषणापत्र देखे, लेकिन इस संदर्भ में, कला समीक्षक की भूमिका यह समझाने के लिए महत्वपूर्ण थी कि कलाकार क्या व्यक्त करना चाहते थे।

भूपेन खक्कर जैसे चित्रकार ने स्थानीय नाई या एक घड़ी मरम्मत करने वाले को उसी रूप में चित्रित किया जैसे समलैंगिक पुरुषों और मध्यम वर्ग की नैतिकता के साथ उनके संघर्ष के अनुभवों को चित्रित किया है। बड़ौदा के कथात्मक चित्रकारों का एक महत्वपूर्ण योगदान था उनकी उदार अभिरुचि और लोकप्रिय रूपाकारों का कला में संयोजन राजमार्गों के ट्रकों से लेकर ऑटोरिक्शा तक, छोटे शहरों के गली-मोहल्लों और छोटी दुकानों में हर जगह दिखाई देते हैं।

खक्कर के साहसिक कदम और बड़ौदा के कलाकारों के लोक कला उत्थान से प्रेरणा लेते हुए, मुंबई के युवा चित्रकारों ने विज्ञापनों और फ़िल्म होर्डिंग्स से लेकर कैलेंडर के लोकप्रिय आकृतियों से प्रेरणा प्राप्त की। ये चित्रकार अपने कैनवास पर फ़ोटोग्राफ़िक आकृतियों का उपयोग करने लगे थे।

यह शैली अभी तक जो शैली हमने देखी है, उससे बहुत भिन्न है। यह अपने अर्थ में आधुनिक नहीं है। यह द्वि-अर्थी और प्रयोगात्मक तकनीकी पर आधारित है और यहाँ तक कि जलरंग की इस तकनीक में एक चित्र को छायाचित्र (फ़ोटोग्राफ़) की शैली में बनाया जाता है।

भूपेन खक्कर, 'जनता वॉच रिपेयरिंग', 1972, निजी संग्रह, भारत

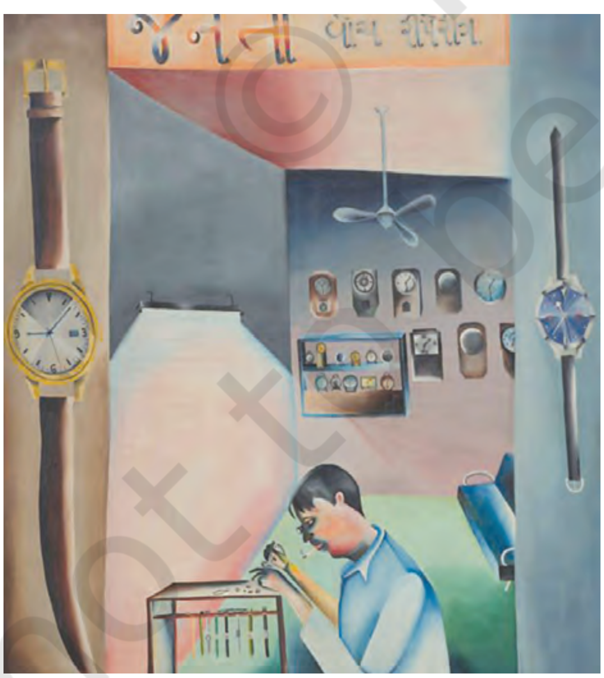

न्यू मीडिया आर्ट— 1990 के दशक से

भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के परिणामस्वरूप 1990 के दशक में बड़े शहरों में वैश्वीकरण का प्रभाव सबसे पहले अनुभव किया गया। एक तरफ भारत ने सूचना प्रौद्योगिकी में बहुत उन्नति की, वहीं इसमें कई विशिष्ट सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों को भी देखा गया। आर्थिक प्रगति और सामाजिक अशांति के ऐसे असाधारण समय में, कलाकार बदलाव के उस समय पर अपनी प्रतिक्रिया देने के तरीकों की खोज करने लगे। चित्रकला और मूर्तिकला जैसे माध्यम जिस पर जो कलाकार अपनी विशिष्ट सृजनात्मक अभिव्यक्ति के लिए गर्व से हस्ताक्षर करते थे, ने अपना महत्व खो दिया। इसके अतिरिक्त, वीडियो जैसे नए उपलब्ध माध्यमों ने उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। यहाँ तक कि फ़ोटोग्राफ़ी भी उन्हें अधिक आकर्षक लगी, क्योंकि इससे अनेक प्रतियाँ बनाकर कई लोगों तक पहुँचाने की सुविधा थी।

not to be republished © NCERT

हालाँकि, कला का वह रूप जो उत्तरोत्तर समकालीन था, वह संस्थापन कला थी। इसने चित्र, मूर्तिकला, फ़ोटोग्राफ़ी, वीडियो और यहाँ तक कि टेलीविज़न को भी एक साथ संयोजित करने का एक अवसर प्रदान किया। यह माध्यम पूरे हॉल में फैल सकता है और वह चारों ओर से लोगों का ध्यान आकर्षित कर सकता है। एक दीवार पर हम चित्र देख सकते हैं, दूसरी दीवार पर काँच के शोकेश में प्रदर्शित छायाचित्रों के साथ दीवार से लटकी मूर्तियों का दूसरा वीडियो। इससे एक नए गहरे अनुभव की प्राप्ति हुई जिसने हमारी सभी इंद्रियों को प्रभावित किया। हालाँकि, यह प्रौद्योगिकी पर अधिक निर्भर था और इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि अधिकांश शुरुआती संस्थापन कलाकार बड़े शहरों से ही आए, जैसे मुंबई से नलिनी मलानी और दिल्ली से विवान सुंदरम। उनकी विषयवस्तु गंभीर और विचारोत्तेजक थी।

फ़ोटोग्राफ़ी को लंबे समय तक चित्रकला का प्रतिद्वंद्वी माना जाता था, क्योंकि वह सरलता से प्रतिकृतियाँ उत्पन्न कर सकता था, जिसने कलाकारों को नए विचार दिए। उन्होंने एक नई तकनीक विकसित की, जिसे 'फ़ोटोयथार्थवाद' कहा जाता है, जिसका प्रयोग अतुल डोडिया ने रेने ब्लॉक गैलरी, न्यूयार्क में 'बापू' नामक कला कृति के निर्माण में किया है। कई युवा कलाकारों ने एक छायाचित्र या टेलीविज़न स्क्रीन की तरह चित्र बनाने के लिए तैल या एक्रिलिक रंगों का प्रयोग किया। टी.वी. संतोष और शिबू नटसन ने एक ओर सांप्रदायिक हिंसा पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए 'फ़ोटोयथार्थवाद' का प्रयोग किया और साथ ही साथ हमें भारत की तकनीकी प्रगति के कारण यहाँ के शहरों में होने वाले परिवर्तन की एक झलक भी प्रदान की।

जैसा कि कलाकारों ने देखा कि फ़ोटोग्राफ़ी का प्रयोग समाज में होने वाले परिवर्तनों के प्रमाण के लिए भी प्रयोग किया जा सकता था। शीबा चाची, रवि अग्रवाल, अतुल भल्ला एवं अन्य लोगों ने हमारे समाज के हाशिये पर रहने वाले लोगों की तसवीरें खीचीं जिन पर हम अपने दैनिक जीवन में अधिक ध्यान नहीं देते हैं, जैसे— महिला तपस्वियों, समलैंगिक लोग और इस तरह के अन्य विषय। वे पारिस्थितिकी तंत्र, जैसे— नदियों के प्रदूषण और शहरों की भीड़ आदि पर अकसर अपनी चिंता व्यक्त करते थे। फ़ोटोग्राफ़ी और वीडियो ने अनेक समकालीन कलाकारों को प्रभावित किया है।

समकालीन कला लगातार बदल रही है और प्रौद्योगिकी का प्रयोग करने वाले कलाकार और संग्रहाध्यक्ष दुनिया को बेहतर ढंग से समझने के लिए कला की भूमिका को पुन: परिभाषित कर रहे हैं।

वर्तमान सदी में देश के लगभग सभी बड़े शहरों में सार्वजनिक व व्यक्तिगत कला दीर्घाएँ हैं जहाँ कलाकार समुदाय विविध माध्यमों का प्रयोग करते हुए

© NCERT not to be republished

कला सृजन में लगे हैं। इनमें डिजिटल पेंटिंग भी शामिल है। कलाकारों के प्रयोग, प्रभाव और भावाभिव्यक्ति को सूचीपत्रों (कैटलॉग) के माध्यम से प्रलेखित किया गया है। यहाँ कि सोशल मीडिया ने भी स्थानीय कलाओं के विकास में प्रमुख भूमिका निभाई। दृश्यकला के विद्यार्थी के रूप में आपको अपने शहर के कलाकारों की कृतियों के बारे में पता लगाना चाहिए। वे कलाकार किन शहरों में गए और उनकी कृतियों के बारे में भी सूचनाएँ संग्रहित करनी चाहिए। कला-दीर्घाओं का भ्रमण करके समाज में उनके योगदान के बारे में भी जानने का प्रयास करें।

प्रोजेक्ट

राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय (एन.जी.एम.ए.) या अपने शहर के किसी अन्य संग्रहालय अथवा एन.जी.एम.ए. की वेबसाइट पर जाएँ और अंतर्राष्ट्रीय तथा स्वदेशी कला के संदर्भ में 1947 के बाद आधुनिक भारतीय कला के विभिन्न स्वरूपों को समझने के लिए समय अवधि पर काम करें। विद्यार्थियों को यह भी नोट करना है कि समय सीमा कहाँ समाप्त होती है। शिक्षकों को कला के अर्थ को जनता तक पहुँचाने में संग्रहाध्यक्ष और कला समीक्षकों की भूमिका पर चर्चा करनी चाहिए। प्रत्येक कलाकार द्वारा प्रयुक्त सामग्री के प्रकार पर भी नोट लिखना चाहिए।

अभ्यास

1. पटचित्र 'ऑडियो-विज़ुअल' स्टोरी का एक रूप है, जो भारत के कुछ हिस्सों में अभी भी प्रचलित है। कहानी कहने के इस पारंपरिक रूप की तुलना 1980 के दशक के बाद से कुछ बड़ौदा कलाकारों द्वारा अपनाई गई आधुनिक कथाकारिता से करें।
2. वीडियो और डिजिटल मीडिया जैसी नई तकनीक समकालीन कलाकारों को नए विषयों के साथ प्रयोग करने के लिए कैसे प्रोत्साहित करती है? वीडियो कला, संस्थापन कला और डिजिटल कला जैसे विभिन्न कला रूपों पर टिप्पणी करें।
3. आप 'सार्वजनिक कला' से क्या समझते हैं? अपने निवास या स्कूल और उनके आसपास रहने वाले विभिन्न समुदायों के बारे में जानकारी प्राप्त करें और उनकी कला की समझ को जानिए। यदि आपको एक सार्वजनिक स्मारक तैयार करनी है, तो आप इसे कैसे डिज़ाइन करेंगे कि लोग इसके साथ अपनी संबद्धता स्थापित कर सकें?
4. आप कला की दुनिया को कैसे समझते हैं? कला की दुनिया के विभिन्न घटक क्या हैं और ये कला बाज़ार से किस प्रकार संबंधित हैं?

© NCERT not to be republished

मध्यकालीन संतों का जीवन

'मध्यकालीन संतों का जीवन' हिंदी भवन का एक भित्ति चित्र है, जिसे बिनोद बिहारी मुखर्जी द्वारा 1946–47 के मध्य औपनिवेशिक शासन से भारत के स्वतंत्र होने के कुछ पहले बनाया गया था। यह भित्ति चित्र फ्रेस्को बूनो पद्धति द्वारा कक्ष की तीन दीवारों, ऊपरी अर्द्ध भाग को ढकते हुए करीब 23 मीटर के क्षेत्र में बनाया गया है।

बिनोद मुखर्जी का कौशल, हमें भारतीय जीवन की महान सामंजस्यपूर्ण एवं सहिष्णु परंपरा का स्मरण कराता है जो कि रामानुज, कबीर, तुलसीदास, सूरदास एवं अन्य महान भक्त कवियों के शिक्षण में मिलता है।

अल्प नेत्र ज्योति के बावजूद कलाकार ने सीधे (प्रत्यक्ष) दीवार पर बिना चित्र संयोजन के चित्रण किया। मध्यकालीन संतों का जीवन आधुनिक शैली में चित्रित किया गया, जिसमें बहुत ही कम रेखाओं का अंकन किया गया। एक ही समय में प्रत्येक आकृति, रेखाओं के लयात्मक ताने-बाने से पड़ोस की आकृति से संबंधित होती है और कुछ मायनों में यह भित्ति चित्र बुने हुए चित्रित, सुसज्जित कपड़े का स्मरण कराता है।

मदर टैरेसा

एम.एफ़. हुसैन द्वारा बनाया गया मदर टेरेसा का संत जैसी छवि का चित्र 1980 के दशक का है। यह एक विशेष शैली में, उस कलाकार द्वारा चित्रित है जिसने आधुनिक भारतीय कला की नई भाषा का सृजन किया था। मुख विहीन मदर की छवि एक शिशु को हाथों में पकड़े हुए, कई बार चित्र में दिखाई देती है, जहाँ हाथों के चित्रण पर अधिक ध्यान दिया गया है। केंद्र में बैठी हुई माँ की गोद में एक युवक क्षैतिज रूप में लेटा है। यह दृश्य कलाकार की पाश्चात्य कला से घनिष्ठता को दर्शाता है। विशेषतः इतालवी नवजागरण के प्रसिद्ध कलाकार माइकल एंजेलो की कृति पिएटा से इसकी घनिष्ठता उजागर होती है। दूसरी तरफ़ सपाट आकार दृश्य का उपयोग आधुनिकता को दर्शाते हैं। वे पेपर कटआउट के एक कोलाज की तरह दिखाई देते हैं। कलाकार को मदर टेरेसा के जीवन को यर्थाथ रूप में दिखलाने में रुचि नहीं है, बल्कि उन्होंने नितांत संकेतों का प्रयोग किया है। हम जैसे दर्शकों को कहानी का सार समझने के लिए कलाकार संकेत छोड़ता है। यह घुटने के बल बैठी हुई महिला की आकृति है, जो एक तरह से हमें उस कहानी की ओर संकेत करती है जो भारत में असहायों के उपचार एवं पोषण को प्रकट करती है।

Chapter 7.indd 114 25 February 2022 05:24:02

हल्दी ग्राइंडर

अमृता शेरगिल ने 1940 में 'हल्दी ग्राइंडर' नामक चित्र चित्रित किया। यह वह समय था जब वह भारत के सुखद ग्रामीण दृश्य से प्रेरणा ले रही थीं। ऐसा दृश्य, जिसमें भारतीय महिलाएँ सूखी हल्दी पीसने की पारंपरिक गतिविधि में व्यस्त हों, को भारतीय शैली में चित्रित किया जाना था। यह आश्चर्यजनक नहीं कि उन्होंने चित्र में चमकदार एवं नम रंगों को प्रयुक्त किया। यूरोप में आधुनिक कला में प्रशिक्षित, उन्हें उत्तरी भारत के 'लघुचित्र शैली परंपरा' एवं 'पॉल गांग' के आधुनिक कला की भी समान समझ थी। एक कलाकार के तौर पर वह प्रशंसनीय थीं। यह इसी का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि उन्होंने चमकीले रंगों को एक-दूसरे के पास लाते हुए बाहरी रेखाओं के बजाय रंग विरोधी संयोजन से व्यक्ति के आकारों को बनाया। इस तरह के चित्र हमें, उदाहरण के तौर पर उत्तर भारत के बसोहली चित्र शैली की याद दिलाते हैं। महिलाएँ एवं पेड़ सपाट आकार से चित्रित हैं। शेरगिल को भू-दृश्य की गहराई बनाने में रुचि नहीं थी और वह आधुनिक कलाकार की भाँति अर्द्ध-अमूर्त स्वरूप को पसंद करती थीं।

Chapter 7.indd 115 25 February 2022 05:24:03

फ़ेयरी टेल्स फ्रॉम पूर्व पल्ली

यह चित्रकला एक्रेलिक शीट पर जल और तैलीय रंगों का उपयोग करके 1986 में के.जी. सुब्रमण्यन ने बनाया था। यह एक बहुसर्जनात्मक लेखक, विद्वान, शिक्षक एवं कला-इतिहासकार का कार्य है, जो भारत एवं विश्व की विभिन्न कला परंपराओं के साथ अपने गहरे परिचय से आकर्षित रहा है। यह शीर्षक शांतिनिकेतन के स्थानीय क्षेत्र पूर्व पल्ली में उनके घर को उल्लेखित करता है, जहाँ से उनकी कल्पना विश्व भर में घूमती हुई प्रतीत होती है। उनके काल्पनिक भू-दृश्य में एक अजीब दुनिया है, जिसमें पक्षी एवं जानवर मनुष्यों से अपने कंधे रगड़ते हैं, असामान्य पेड़ हैं जो पत्तियों के स्थान पर पंख उगाते हैं। चित्र की शैली रेखीय (रेखाचित्र) है और रंगों को तीव्रता से ब्रुश से रेखाएँ बनाकर भरा जाता है। रंग संयोजन प्राकृतिक है। धूसर, हरे एवं भूरे रंगों का प्रयोग किया गया है। शीर्ष पर महिला एवं पुरुष की आकृतियाँ कालीघाट जैसे शहरी लोक कला का स्मरण कराती हैं जो कि उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में औपनिवेशिक समय से कलकत्ता में प्रचलित थीं। पुनः पारंपरिक लघुचित्रों की तरह आकृतियाँ एक के ऊपर एक व्यवस्थित की गई हैं बजाय, एक-दूसरे के पीछे सपाट धरातल पर सृजित करते हुए। यह आधुनिक कला का प्रतिनिधित्व करता है।

Chapter 7.indd 116 25 February 2022 05:24:04

व्हर्लपूल

यह छापाचित्र भारत के सम्मानित छापा कलाकार कृष्णा रेड्डी द्वारा 1963 में बनाया गया था। यह नीले रंग के विभिन्न तानों से बनाया गया एक आकर्षक संयोजन है। प्रत्येक रंग दूसरे रंग में मिश्रित होता हुआ एक सशक्त जाल का आलेखन निर्मित करता है। यह छापाचित्र नयी तकनीक का परिणाम है जिसे इन्होंने एक प्रसिद्ध छापाकार स्टेनले विलियम हेटर के साथ अटेलियर 17 नामक प्रसिद्ध स्टूडियो में विकसित किया था। इस पद्धति को 'विस्कोसिटी प्रिंटिंग' के रूप में जाना जाता है, जिसमें विभिन्न रंग एक ही धातु मुद्रण प्लेट पर एक साथ प्रयुक्त होते हैं। प्रत्येक रंग अलग-अगल मात्रा में अलसी के तेल के साथ मिलाए जाते हैं। जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि रंग एक-दूसरे में न मिले। छापाचित्र की विषयवस्तु मुख्यतः जल की तरंग से संबंधित है जो जल एवं तेल किस प्रकार परस्पर अंतर्क्रिया करते हैं, इस समझ पर आधारित है। प्रसिद्ध छापाचित्र न्यूयॉर्क के मेट्रोपॉलिटन म्यूज़ियम ऑफ़ आर्ट में संग्रहित है।

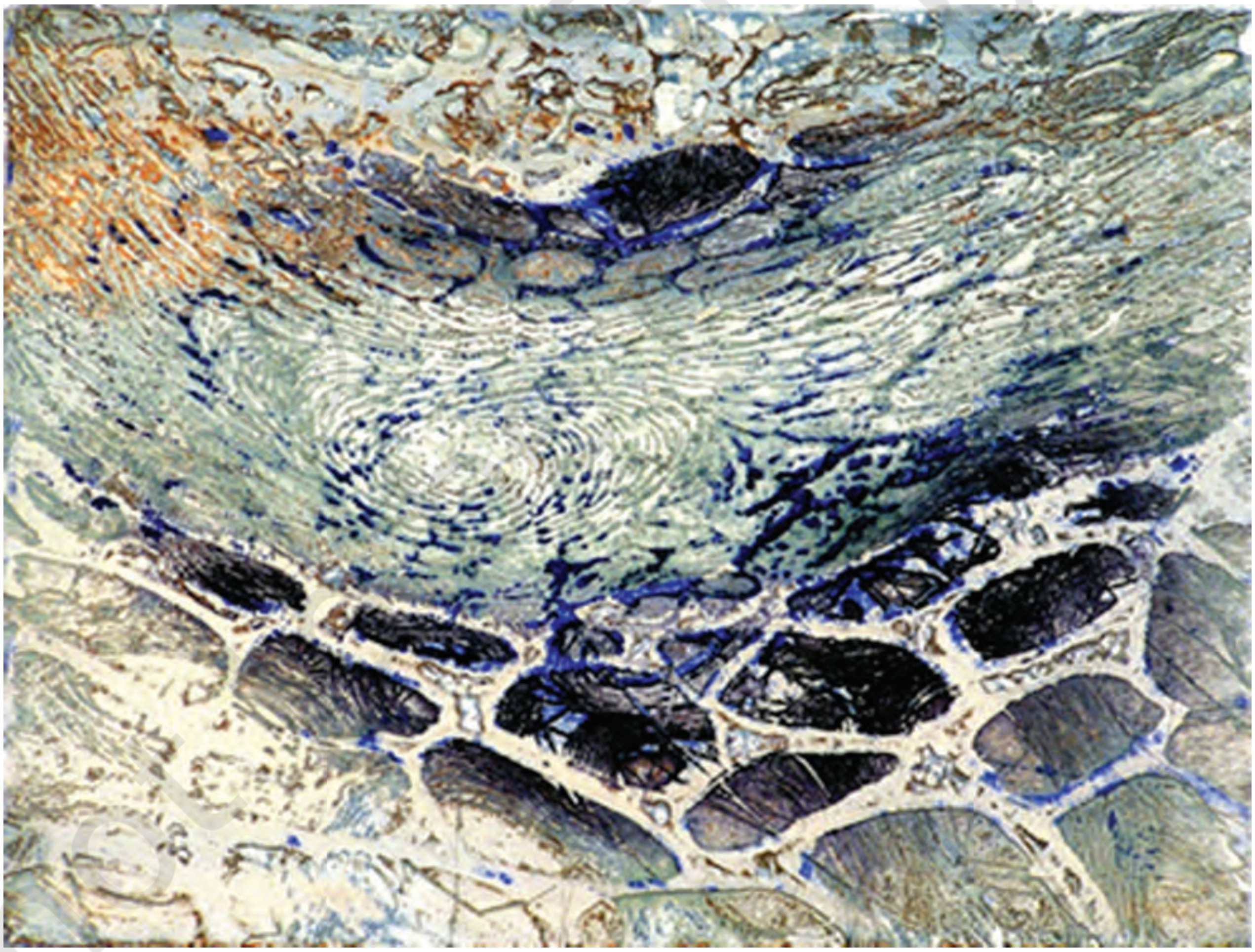

Chapter 7.indd 117 25 February 2022 05:24:04

चिल्ड्रन

यह एक ग्राफ़िक प्रिंट है, जिसको कागज़ पर एक रंगीय एचिंग से सोमनाथ होर (1921–2006) ने 1958 में तैयार किया था। इस छापाचित्र में 1943 के बंगाल अकाल को दर्शाया गया है, जिसका गहरा प्रभाव, सोमनाथ होर के ऊपर पड़ा था। उनके आरंभिक ड्राइंग एवं रेखांकन, अकाल के असहाय शिकार लोगों के जीवन से संबंधित तत्कालीन अनुभव से बनाए गए हैं, जिनमें— मरते हुए किसान, उनके दर्द, बीमार और बेघर हुए स्त्री-पुरुषों, बच्चों और जानवरों के चित्र हैं। उनके रेखाचित्रों में हम तान या आभाओं के द्वारा प्रतिरूपण को कभी-कभी देखते हैं। इस एचिंग में 1943 के अकाल ग्रसित बच्चों की त्रासदी को दिखाया गया है, जो वस्तुतः उनकी स्मृति में उकेरे हुए हैं। ये एक सघन बुना हुआ संयोजन है, जिसमें पाँच खड़ी आकृतियाँ बिना किसी पृष्ठभूमि, परिप्रेक्ष्य और परिवेश के आपस में वार्ता करती हुई दिखाई गई हैं। ये आकृतियाँ रेखाप्रधान हैं और इनमें उनका धड़ कंकालनुमा है, जो मलेरिया से ग्रसित है और जिनकी पसलियों की हड्डियाँ स्पष्ट रूप से दिख रही हैं। इन आकृतियों में एक विशाल सिर, छोटा-सा चेहरा और पूरा शरीर पतली-पतली दो डंडे जैसी टांगों पर खड़ा दिखाई देता है। इनकी रेखाएँ बहुत ही मज़बूती से मुद्राओं एवं शरीर को परिभाषित करती हैं, जिनमें स्पष्ट रूप से पसली के पिंजड़े को, गालों की हड्डी की रेखाएँ बहुत स्पष्ट, गहरे कटे हुए घाव जैसा दिखाई देती हैं। त्वचा के नीचे हड्डियों की संरचना कुपोषण के प्रभाव को दिखाती है। यह चित्र कहानी के गुणों को उत्पन्न करता है। बिना किसी दृश्यगत आँकड़ों की सहायता के, इसे दिखाने के लिए बहुत ही सरल और संक्षिप्त विधि का प्रयोग किया गया है। ये बच्चे समाज के सबसे कमज़ोर वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। सोमनाथ होर की अन्य कलाकृतियों में पीजैंट्स मीटिंग, वाउन्डेड एनिमल, द चाइल्ड, मदर विद चाइल्ड, मोरनर्स एंड द अनक्लैड बेगर फ़ैमिली आदि प्रमुख हैं।

Chapter 7.indd 118 25 February 2022 05:24:05

देवी

यह कागज़ पर छपा ज्योतिभट्ट (1934) द्वारा 1970 में बनाया गया एचिंग है। ज्योतिभट्ट ने चित्रकला, छापाकला एवं छायांकन का अध्ययन किया और वह अपने गुरु के.जी. सुब्रमण्यन से प्रभावित थे। उन्होंने लोक परंपराओं और लोकप्रिय प्रविधियों के आधार पर अपनी स्वयं की कला भाषा को विकसित किया। उनके कार्य में पारंपरिक स्थानीय कलाओं एवं आधुनिकता के बीच के कोमल संबंध को देखा जा सकता है, जिसमें अतीत के पारंपरिक रूपाकार को समकालीन गत्यात्मकता में अनुवादित (रूपांतरित) किया गया है। इस छायाचित्र में देवी की छवि को पुनः संदर्भित और परिभाषित किया गया है, जहाँ सम्मुख मुख को रेखीय अंकन और लोक अभिप्राय एवं पैटर्न को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। देवी की आवक्ष छवि को एक प्रतिमा की भाँति स्थापित किया गया है। छापे की द्वि-आयामिकता और अभिप्राय देवी के आवक्ष के तांत्रिक दर्शन को अभिव्यक्त करते हैं। साथ ही साथ वे स्वविकास और स्वयं उत्पत्ति की शक्ति का भी जीवंत प्रस्तुतीकरण दर्शाती है। जिसमें शक्ति की वास्तविकता को गतिशीलता एवं स्थायित्व के सिद्धांत के रूप में देखा जाता है। ज्योतिभट्ट के अन्य प्रसिद्ध चित्रों में कल्पवृक्ष, सेल्फ़ पोर्ट्रेट, विस्मृत स्मारक, सीता का तोता, स्टील लाइफ़ विद टू लेंपस्, स्केटर्ड इमेज अंडर द वार्म स्काई, तीर्थांकर आदि हैं।

not to be republished

ऑफ़ वाल्स

प्रस्तुत चित्र एचिंग है, जिसे ज़िंक प्लेट से कागज़ पर छापा गया है। इसकी रचना अनुपम सूद ने 1982 में की थी। अनुपम सूद ने छापाचित्र कला का अध्ययन स्लेड स्कूल ऑफ़ फ़ाइन आर्ट्स, यूनिवर्सिटी कॉलेज, लंदन से 1970 के दशक में किया। भारत लौटने पर उन्हें भारत के दैनिक जीवन के यर्थाथ ने चित्रण के लिए प्रेरित किया। समाज के हाशिये पर रह रहे लोगों की विभिन्न सामाजिक समस्याओं में गहरी रुचि होने के बावजूद अनुपम सूद ने उन्हें कलात्मक रूप से समझने के लिए गहरी रुचि प्रदान की। इस चित्र में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि किस प्रकार उन्होंने एक स्त्री के रिक्त मुखाकृति के द्वारा एक नारी का आकर्षक चित्र सृजित किया। मुखाकृति में विवरणों के अभाव में भी अनुपम सूद, दुख और विषाद के भावों को सहजता से स्पष्ट कर देती हैं। चित्र में एक नारी विदीर्ण दीवार के साथ फुटपाथ पर अकेली बैठी है। अग्रभूमि में हमें एक सोते हुए गरीब व्यक्ति का अधोभाग दर्शाया गया है जिसके विपरीत स्त्री को वस्त्रों में अंकित किया गया है। यह संपूर्ण संयोजन इस छायाचित्र में विषाद के भाव को अभिव्यक्त करता है।

रूरल साउथ इंडियन मेन-वुमन

यह कागज़ पर लक्ष्मा गौड़ (1940) द्वारा 2017 में बनाई गई एचिंग है। एक कुशल ड्राफ़्ट्स मेन और प्रिंट निर्माता लक्ष्मा गौड़ ने भित्ति चित्र एवं छापाचित्र की शिक्षा एम.एस. विश्वविद्यालय बड़ौदा से प्राप्त की थी। उन पर उनके शिक्षक के.जी. सुब्रमण्यन की प्रयोगधर्मी दृश्य परंपराओं के चित्रण, शास्त्रीय लोक और जनप्रिय संस्कृति का विशेष प्रभाव था। लक्ष्मा गौड़ ललित कला एवं शिल्प के तीखे विभेद को कम करने का प्रयास करते हैं और एक नई भावात्मक शैली प्रस्तुत करते हैं, जिसके कारण वे एक साथ कई माध्यमों पर अपना समान अधिकार स्थापित करते हैं, जैसे— ग्लास पेंटिग, टेराकोटा और कांस्य विद्या। प्रस्तुत एचिंग में मानवाकृतियों को पृष्ठभूमि में पेड़ के साथ अंकित किया गया है जो उनकी बचपन से संबंधित ग्रामीण पृष्ठभूमि की स्मृतियों पर आधारित है। उन्होंने चित्र में ग्रामीण जीवन को शहरी शालीनता के साथ प्रस्तुत किया है, जिसमें अति यथार्थवादी मनोवैज्ञानिक आभा कविता और कल्पना के साथ मिश्रित होकर सतह पर दिखाई देती है। इस दृष्टांत में ग्राम्य गीतों को कृषक पुरुषों एवं स्त्रियों के द्वारा चित्रांकित किया गया है। जो यथार्थवादी अवयवों को उच्च अलंकारिकता के साथ ग्रामीण रूप की वास्तविकता में प्रस्तुत करता है, लेकिन साथ ही शैलीगत सौम्यता के प्रति झुकाव भी देखा जा सकता है, जिससे आकृतियाँ कठपुतली की भाँति प्रतीत होती हैं। छापाचित्र रेखांकन पर आधारित रंगीन छवि है, जो कलात्मक दृष्टि से यथार्थवादी किंतु सामान्य और सौम्य अभिव्यंजनावादी विरूपण है। लक्ष्मा गौड़ की अन्य प्रमुख कलाकृतियाँ वुमन, मेन, लैंडस्कैप ऑफ़ टर्की, अनटाइटल्ड, शियान चाइना आदि हैं।

ट्राइम्फ़ ऑफ़ लेबर

यह विशालकाय कांस्य मूर्तिशिल्प, देवी प्रसाद राय चौधरी (1899–1975) द्वारा निर्मित है। इसे चेन्नई के मरीना तट पर 1959 में गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर स्थापित किया गया था। इस शिल्प में चार पुरुष आकृतियों को एक चट्टान को हिलाने (सरकाने) का प्रयास करते दिखाया गया है, जो राष्ट्र निर्माण में मानवीय श्रम के महत्व एवं योगदान को दर्शाता है। इस शिल्प में अजेय पुरुष प्रकृति के साथ कठिन एवं दृढ़संकल्प शक्तिशाली युद्ध करते दिखाए गए हैं। यह श्रम की प्रकृति के विरुद्ध वह छवि है जो उन्नीसवीं शताब्दी का एक लोकप्रिय स्वच्छंद विषय रहा है। देवी प्रसाद को श्रमिकों की मज़बूत मांसपेसियों, शारीरिक संचरना के प्रति विशेष आकर्षण था, इसलिए वह उनकी अस्थियों, मांसपशियों, नसों और मांसलता के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं। इस प्रयास में अकसर उनके चित्र कृशकाय देहयष्टि के साथ प्रस्तुत किए गए हैं। उन्होंने शिल्प में विशाल, भारी स्थिर चट्टान को हिलाने के लिए कठिन शारीरिक श्रमशक्ति की अभिव्यंजना की है। मानव आकृतियाँ इस प्रकार से संयोजित की गई हैं कि वे दर्शक में जिज्ञासा उत्पन्न करती हैं और दर्शक चारों तरफ से घूमकर शिल्प को देखने के लिए आकर्षित होता है। इस शिल्प में श्रमिक आकृतियों का समूह एक सार्वजनिक स्थान पर ऊँचे अधिष्ठान पर स्थापित है। यह ठीक उस परंपरा के विपरीत है, जिसमें राजा या ब्रिटिश गणमान्यों की प्रतिमाएँ (पोट्रेट) लगाई जाती थीं।

Chapter 7.indd 122 25 February 2022 05:24:07

संथाल फ़ैमिली

रामकिंकर बैज ने 1937 में इस विशालकाय मूर्तिशिल्प को निर्मित किया था। इसका निर्माण धातु के आमेटर और कंक्रीट मिश्रित सीमेंट से किया गया है तथा भारत के सर्वप्रथम राष्ट्रीय कला विद्यालय, 'शांतिनिकेतन' के कलाभवन प्रांगण में रखा गया है। इस शिल्प में एक दृश्य उपस्थित किया गया है, जिसमें संथाल पुरुष अपने बच्चों को एक डंडे से जोड़े हुए दोहरी टोकरी में ले जा रहा है और साथ ही बगल में पत्नी को उसके साथ चलते हुए प्रदर्शित किया गया है, दूसरी तरफ एक कुत्ते को दिखाया गया है। संभवतः यह शिल्प, प्रवासी परिवार के एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर पलायन यात्रा को दिखाता है, जो अपनी समस्त संपत्ति को ले जा रहा है। यह कलाकार के लिए दैनिक दृश्य है, जिस ग्रामीण पर्यावरण के मध्य वो रहता है, लेकिन वह इसे एक स्मारकीय स्तर प्रदान करता है। यह शिल्प चारों तरफ से उकेरकर बनाया गया है अर्थात् दर्शक इसे सभी दिशाओं से देख सकता है। यह एक कम ऊँचे अधिष्ठान पर रखा गया है। दर्शक को यह अनुभव होता है कि यह शिल्प दर्शक के ही तत्कालीन है। इस शिल्प का महत्व इस तथ्य पर है कि यह भारत का प्रथम आधुनिक जनमूर्ति शिल्प है। इसे देखने के लिए हमें संग्रहालय में जाने की आवश्यकता नहीं है। यह खुले में रखा गया है, जिससे सभी इसे देख सकें। इसके निर्माण में प्रयुक्त सामग्री इस शिल्प को और अधिक महत्वपूर्ण बना देती है, क्योंकि कलाकार ने पारंपरिक माध्यम, जैसे— संगमरमर, लकड़ी या पत्थर का प्रयोग न करते हुए सीमेंट को वरीयता दी है, जो आधुनिकीकरण का प्रतीक है।

© NCERT not to be republished

क्राइज़ अन हर्ड

यह कांस्य मूर्तिशिल्प अमरनाथ सहगल द्वारा 1958 में बनाया गया है, हालाँकि कलाकार ने केवल अमूर्तन का प्रयोग किया है, जिसमें तीन आकृतियाँ छड़ी की भाँति और सपाट लयबद्ध समतल दिखाई देती हैं। यद्यपि उन्हें एक परिवार अर्थात् पति, पत्नी एवं एक बच्चे के रूप में आसानी से समझा जा सकता है। वे अपनी बाहों को ऊपर उठाए हुए हैं और सहायता के लिए चीखते हुए दिखाए गए हैं। मूर्तिशिल्प के माध्यम (साम्रगी) से हाथ के संकेत अभिव्यक्त करके उनकी विवशता को एक स्थायी आकार में बदल दिया है। इस मूर्तिशिल्प को समाजवादी के रूप में समझना संभव है, जहाँ पर कलाकार अपनी श्रद्धांजलि उन लाखों निस्सहाय परिवारों को देता है, जिन्हें सहायता की आवश्यकता है और जिनकी चीखें बहरे कानों में पड़ती हैं। समाजवादी कवि के अलावा, मुल्कराज आनंद ने इस कार्य के विषय में हृदयस्पर्शी ढंग से लिखा है। यह कलाकृति अब राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय, नयी दिल्ली में संग्रहित है।

Chapter 7.indd 124 25 February 2022 05:24:08

गणेश

यह मूर्तिशिल्प ऑक्सीकृत ताँबे में पी.वी. जानकीराम द्वारा 1970 में बनाया गया है। यह मूतिशिल्प एन.जी.एम.ए., दिल्ली में संग्रहित हैं। उन्होंने चित्रात्मक मूर्तिकला को मुक्त रूप में बनाने के लिए ताँबे की धातुशीट (चादर) का उपयोग किया है और रैखिक तत्वों के साथ उसकी सतह को अलंकृत किया है। धातु की चादर को पीटकर अवतल सतह बनाई गई है और उस पर रैखिक विवरणों को वेल्ड किया गया है। ये रैखीय और अलंकारिक तत्व धार्मिक प्रतिमाओं के रूप में गंभीर चिंतन को आमंत्रित करते हैं। जानकीराम, दक्षिण भारत के प्राचीन मंदिरों के मूर्तिशिल्प से प्रभावित हैं। गणेश की आकृति को सम्मुख मुद्रा में तैयार किया गया है, जो कि गुफा एवं मंदिर मूर्तिशिल्प का एक महत्वपूर्ण देशज चरित्र है। हिंदू धर्म में गणेश लोकप्रिय एवं सबसे अधिक पूजे जाने वाले देवताओं में से एक हैं। इस मूर्तिशिल्प में गणेश एक संगीत वाद्ययंत्र, वीणा बजा रहे हैं। साम्रगियों का तकनीकी सम्मिश्रण होने के बाद भी मूर्तिशिल्प का विवरण उनके शिल्प कौशल को प्रकट करता है। उन्होंने देशज कौशलता (कारीगरी) को खुलेपन की गुणवत्ता के साथ भी प्रयोग किया है। गणेश पारंपरिक शास्त्र एवं विषय के द्वारा पारंपरिक कल्पना की करीबी समझ और उनके ध्वन्यात्मक विकास को प्रकट करते हैं। उन्होंने समग्र रूप में रैखीय विवरणों को विस्तृत रूप दिया है। आयतन मात्रा के होते हुए भी, त्रि-आयामी गुण पर ज़ोर देने के बजाय उन्होंने मूर्तिशिल्प की रूपरेखा रैखिक आकार की तैयार की है। काव्यात्मक शैली के द्वारा लय एवं वृद्धि को सम्मिलित किया गया है। यह लोक एवं पारंपरिक शिल्प कौशलता (कारीगरी) के मिश्रण का एकीकरण भी है।

not to be republished © NCERT

वनश्री

यह शिल्प कार्य, मृणालिनी मुखर्जी द्वारा 1994 में बनाया गया था। उन्होंने इस मूर्ति को बनाने के लिए असामान्य सामग्री का प्रयोग किया। उन्होंने सुतली के रेशों का उपयोग किया, एक ऐसा माध्यम जिसका प्रयोग उन्होंने 1970 के दशक के आरंभ से किया था। जटिल तरीका अपनाते हुए उन्होंने जूट के रेशों से गाँठ लगाते हुए एक जटिल आकार को बुना। यह नई साम्रगी के साथ प्रयोग के वर्षों का परिणाम दिखाई देता है। कई वर्षों तक उनकी कला को कार्य शिल्प के रूप में खारिज किया गया था। केवल हाल ही में उनके रेशों के कार्यों ने उनकी कल्पना की मौलिकता एवं साहस के लिए अत्यधिक ध्यान आकर्षित किया है। 'वनश्री' या 'जंगल की देवी' नामक इस शिल्प में वह इस साधारण साम्रगी को एक स्मारकीय रूप देती हैं। यदि आप आकृति के शरीर को ध्यानपूर्वक देखें, तो आप देख सकते हैं कि इसमें आंतरिक (अंत:) अभिव्यक्ति और उभरे हुए होंठ के साथ एक चेहरा है और सबसे ऊपर एक शक्तिशाली प्राकृतिक देवत्व की उपस्थिति है।

© NCERT not to be republished